ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

संत कबीर एवं संत मगनीराम के काव्य में रहस्य-साधना

****

नाम - शतदल मंजरी

शोध छात्रा

तिलकामांझी भागलपुर, विश्वविद्यालय, भागलपुर

Email id: shatdalmanjari@gmail.com

सारांश :

भारतीय जीवन, दर्शन और साहित्य-साधना में रहस्य-साधना की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। जितने प्रकार की भी दार्शनिक चेतनाएँ उपलब्ध हैं, वे समस्त वस्तुतः रहस्य-साधना का ही अंग स्वीकारी जाती हैं।

भक्ति-कालीन साहित्य की निर्गुणवादी काव्यधारा की दोनों शाखाओं(ज्ञान- मार्गी और प्रेम-मार्गी) का मूलाधार ही रहस्य-साधना को स्वीकारा जाता है। रहस्यवाद के दो रुप माने गए हैं --- साधनात्मक रहस्यवाद और भावनात्मक रहस्यवाद, इनमें से पहला स्वरूप विशुद्ध आध्यात्मिक साधना के अंतर्गत अद्वैतवादी क्रिया-प्रक्रिया में देखा जा सकता है, जबकि दूसरा भावनात्मक रहस्यवाद का स्वरूप काव्य का विषय बनकर अद्वैतवादी चेतना का ही दूसरा स्वरूप हो जाता है। इसी कारण, आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा था कि " साधना के क्षेत्र में जो अद्वैतवाद है, काव्य के क्षेत्र में वही रहस्यवाद है।" (१) काव्यात्मक या भावनात्मक रहस्यवाद वस्तुतः काव्यात्मक अद्वैत-साधना का ही दूसरा नाम है। रहस्यवादी का संबंध चाहे विशुद्ध अध्यात्म या अद्वैत-साधना से हो या फिर भाव-साधना से, वस्तुतः होता वह सत्य का ही अन्वेषक है।

अतः, साधनात्मक एवं भावनात्मक संज्ञा के रहस्यवाद से जो तथ्य स्वीकार किए गए हैं, वह कबीर एवं मगनीराम की वाणी में स्पष्टतः पाये जाते हैं।

अपने साधक और कवि दोनों रुपों के लक्ष्यों की ओर स्पष्ट इंगित करते हुए जहाँ कबीर ने कहा है कि --

-

"लोग जाने यहु गीत है, यह तो ब्रह्म विचार।"(२)

वहीं संत मगनीराम कहते हैं---

"ब्रह्म रुप जल अगम अपार, पूरन ब्रह्म कृपाल।"(३)

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

स्पष्टतः, कवि द्वय अध्यात्मवादी चेतना से अनुप्राणित होकर परब्रह्म के बारे में जो कुछ अनुभव कर रहे थे, उसी को अपनी वाणी(कविता) द्वारा वे आम जनों को भी समझाना बुझाना चाहते थे।

मूल शब्दः जीवन, दर्शन, साधना, रहस्यवाद, द्वैत, अद्वैत, आत्मा, परमात्मा।

प्रस्तावना :

रहस्यवाद की स्पष्ट परिभाषा रेखांकित कर पाना सहज कार्य नहीं है, बल्कि अत्यधिक कठिन एवं पेचीदा कार्य है।

परंतु, समय-समय पर विद्वानों ने रहस्यवाद को पारिभाषित करने के अनेक प्रयत्न किए हैं, पर निर्णायक या अंतिम रुप से आज तक कोई भी कुछ नहीं कह सका है। मूलतः, रहस्यवाद का संबंध आध्यात्मिक साधनों के साथ ही स्वीकार किया जाता है। कहीं-कहीं ब्रह्म के आध्यात्मिक या परा-प्राकृतिक स्वरूप के साथ आत्मा की भावात्मक एकता की अनुभूति को रहस्यवाद कहा गया है। साधनात्मक रहस्यवाद जहाँ आत्मा-परमात्मा के ऐक्य की अनुभूति के साधना ज्ञान एवं भक्ति को प्रमुखतः स्वीकार करता है, वहाँ भावनात्मक रहस्यवाद में काव्यमयी भावनाओं का ही प्राधान्य रहा करता है। क्योंकि, दर्शन जहाँ बुद्धि एवं तर्क के सहारे अपने गंतव्य की ओर अग्रसर हुआ करता है, वहाँ कवि भावना को अपना संबल बनाया करता है। संत द्वय दार्शनिक एवं कवि दोनों है, अतः, उनकी साधना में बुद्धि एवं भावना का समन्वय हो जाना स्वाभाविक हो जाता है। हमारे उपनिषद् ब्रह्म को 'रस-रुप' स्वीकार करते हैं और रसानुभूति ह्रदय का कार्य है, तर्क का आश्रय लेनेवाली बुद्धि का नहीं। ब्रह्म ही सत्य एवं नित्य है और सत्य की अनुभूति के लिए पाश्चात्यों के अनुसार सत्य का संबल ही अनिवार्य हुआ करता है। पर भारतीय दर्शन इस प्रकार के सत्य को आभ्यन्तरिक नहीं, बाह्य ही स्वीकारता है। तभी तो उपनिषद् तक रस रुप ब्रह्म की अनुभूति बौद्धिक तर्कों से न मानकर हार्दिक तत्त्वों अर्थात् भावना के स्तर ही स्वीकार करते हैं। कबीर ने कहा है ---

"भाव-भाव में सिद्धि है, भाव-भाव में मेव।
जो मानो तो देव है, नहिं तो भीत को लेव।।"(४)

तभी संत मगनीराम ने भी ब्रह्म की अनुभूति को तर्क-साध्य न मानकर भावना-साध्य ही स्वीकार किया है ---

"संत जमात बटोर जो चले जानिये भूप।

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

राजस, तामस संग फल, मगनीराम अनूप।।(५)

इस अनुभूति के लिए संत मगनीराम ने यद्दपि योग-साधना का आश्रय लिया, पर मात्र मनादि इन्द्रिय निग्रह की सीमा तक। प्रश्रय उन्होंने भी प्रेम-भाव भगति को ही दिया। जबकि, संत कबीर की प्रेम-भाव-भगति का आशय सगुणोपासकों के समान सगुण-साकार स्वरूप के प्रति आसक्ति नहीं है। वे तो विशुद्ध प्रेम के सहारे ब्रह्म की अनुभूति के कायल थे; अतः, प्रेमाभिव्यक्तियाँ स्वतः ही रहस्यरुप एवं रहस्यवाद की सृष्टि करनेवाली हो गई हैं। इसी कारण उनका साधनात्मक रहस्यवाद उतना आकषर्क एवं ग्राह्य नहीं बन पाया, जितना कि भावनात्मक रहस्यवाद। उस पर भी तत्कालीन विविध प्रचलित पद्धतियों का प्रभाव असंदिग्ध है। इसी ओर इंगित करते हुए डॉ. गोविंद त्रिगुणायत ने लिखा है कि -- "कहीं पर उनमें सूफियों के प्रेम-मार्ग का निरुपण मिलता है, कहीं पर हठयोगियों के पारिभाषिक शब्दों एवं प्रक्रियाओं का रहस्यात्मक वर्णन है। कहीं वे सिद्धों के संध्या-भाषा शैली का अनुकरण करते हैं, और कभी उपनिषदों के ढंग पर रहस्यात्मक शैली में तत्त्व का प्रतिपादन। यही कारण है कि उनकी रहस्य-भावना विविध-रुपिणी है तथा उसकी अभिव्यक्ति के विविध स्वरुप, स्तर और सोपान हैं।

जहाँ तक मगनीराम के रहस्य-साधना के मूल तत्त्वों एवं उपकरणों का प्रश्न है,आस्तिकता को सर्वप्रमुख उपकरण स्वीकारा गया है। मगनीराम की आस्तिक मानसिकता सभी प्रकार के प्रश्नों से परे हैं। वे सर्वत्र नास्तिकता का कट्टर एवं घोर विरोध करते हुए दिखाई पड़ते हैं। तभी तो अनात्म एवं अनीश्वर-वादियों की उन्होंने सर्वत्र कड़ी भर्त्सना की है ---

"राम होहि हरि नाम सुनि, भ्रम सुनि सूकर स्वान।
मगनीराम कृपा सुनै, कहै लखै नहि आन।।""(६)

और बाह्याचारों में उलझे आस्तिकों को भी वे नहीं बख्शते ---

"केवल रामै अर्थ है, सबका मगनीराम।और अर्थ सब व्यर्थ है, बिना भेद हरि नाम।।"(७)

और कबीर की आस्तिकता इन सबसे परे अतएव ब्रह्म के सत्य स्वरूप की विधायिनी एवं अनुभूति कराने वाली है। जहाँ वह शून्य-साधना की बात कहते हैं, वहाँ भी उनका संकेत वस्तुतः नाथ-पंथियों के समान अलख किंतु ज्योति स्वरूप परब्रह्म की सत्ता की ओर ही होता है, बौद्धों की तरह निरीश्वर सत्ता की ओर कदापि नहीं।

कबीर तो उपनिषदों के समान ब्रह्म को तत्त्वस्वरुप एवं अनिर्वचनीय स्वीकारते हैं। अनिर्वचनीय एवं मात्र तत्त्व होते हुए भी उनका ब्रह्म अपने-आप में पूर्ण है। उस पूर्ण से परिचय पाना ही उनकी समूची साधना का

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

चरम लक्ष्य है। उनकी अभिव्यक्ति, वाणी के द्वारा संभव नहीं। वह तो गूंगे का गुड़ है, जिसके बारे में कबीर कहते हैं ---

"कह कबीर गूंगे गुड़ स्वाद, बिन रसना का करै बड़ाई।"(८)

वह.शाब्दिक बड़ाई की वस्तु नहीं, वरन् लौ लगाने की वस्तु है, मात्र अनुभूति जन्य उपलब्धि है, उससे चर्म-चाक्षुष साक्षात्कार संभव नहीं। उस अनादि, अखंड, निर्विकल्प सत्ता का आविर्भाव मात्र भावना में ही संभव है अन्य किसी रुप या भाव से नहीं। वह एक निष्प्राण या निर्जीव सत्ता भी नहीं है। सुगन्धि के समान सूक्ष्म होते हुए भी वह सुगन्धि के समान ही अनुभूतिजन्य या घ्राण्य-- अर्थात्, वही अनुभूति की ही वस्तु है। तभी तो कबीर जी कहते हैं कि ---

जाकै मुँह माथा नहीं, नहीं रुप-कुरुप।
पुहुप वास तैं पातरा ऐसा तत्त अनूप।।" (९)

और पुनः कह उठते हैं ---

"भारी कहूँ तो बहु डरूं, हरूवा कहूँ तौ झूठ।
मैं क्या जानूँ राम को, नैना कबहूँ न दीठ।।"(१०)

इस प्रकार, कबीर की ब्रह्म विषयक अनुभूतियाँ निश्चय ही समन्वयात्मक है। रहस्यवादी के लिए, प्रेम और भावना आवश्यक हुआ करती है, कबीर वह बात भली प्रकार जानते थे। वे यह भी जानते थे कि प्रेम के साथ-साथ भक्ति भी आवश्यक है, इसी कारण उन्होंने निर्गुण भक्ति का महत्त्व प्रतिपादित कर खुले हाथों उसका प्रचार-प्रसार भी किया। भगत और भक्ति का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए उन्होंने कहा ---

"भगत हजारी कापड़ा, तामैं मल न समाइ।
साकत काली कमरी, भावै तहाँ बिछाइ।।"(११)

मगनीराम ने भक्ति के लिए, ह्रदय के साथ-साथ आचरण-व्यवहार की पवित्रता को भी आवश्यक कहा है। सात्विक आचरण से ही ह्रदय शुद्ध होकर उस भक्ति का पात्र बन जाता है कि जो अंतर्आत्मा में ही परमात्मा की रहस्यानुभूति करा सकती है। वह भी तब, जबकि उस अलख निरंजन की कृपा हो जाती है। उसकी कृपा के बिना आत्म-साक्षात्कार या आत्मा मे ब्रह्म साक्षात्कार का प्रश्न ही नहीं उठता।

यहाँ कवि द्वय की साखियों में, ब्रह्म की कृपा और उसके प्रति पूर्ण प्रेम-भाव के उदय के लिए उसके अलौकिक सौंदर्य के गुणों का परिचय परमावश्यक है। कबीर जी मानते हैं कि वह परिचय ज्ञान से और पूर्ण ज्ञान पहुँचे हुए गुरु से ही प्राप्त हुआ करता है। उसके गुरु की कृपा आवश्यक है। गुरु ही उसके

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

स्वरूप की पूर्ण अनुभूति कराकर आत्मा-परमात्मा में भावात्मक ऐक्य की स्थिति तक पहुँचाया करता है। तभी तो कबीर जी ने अपनी साधना पद्धति में गुरु का महत्त्व निरुपित करते हुए कहा है --

"सतगुरु की महिमा अनन्त, अनन्त किया उपगार।
लोचन अनंत उघाड़िया, अनन्त दिखावन हार।।"(१२)

और जब गुरु कृपा से, 'अनंत-दिखावनहार' नेत्र खुल जाता है, तब उस परम प्रिय की झाँकी की अनुभूति साधक की समग्र चेतना को विभोर कर देती है। इसी अवस्था को रहस्य-साधना में 'ज्ञान-जागृति' की अवस्था कहा गया है। कबीर की भाँति मगनीराम की अनेक साखियों में इस अवस्था का जीवंत चित्रण मिलता है --

"मन हरिनाम मुये हुआ, इच्छित मगनीराम।
सहज अवस्था पाई जब; तब लौ विधि हरिनाम।।"(१३)

इसी अवस्था को रहस्य-साधना में 'ज्ञान-जागृति" की अवस्था कहा गया है। संत कवि द्वय की अनेक साखियों में इस अवस्था का जीवंत चित्रण मिलता है। रहस्य-साधना में बाधक रुप में कवि द्वय ने माया के अस्तित्व को भी स्वीकारा है। यह अविधा माया अपने प्रभाव से विभोरता की उस स्थिति को अधिक देर तक नहीं बनी रहने देती। तब प्रिय का विरह रहस्य-साधक की आत्मा को व्याकुल-मोहित करने लगता है। प्रेम रहस्य-साधना का मूल तत्त्व है, तो विरह सभी प्रकार से आत्मा का परिष्कार करने वाला, हर क्षण प्रिय या ब्रह्म की निकटता की अनुभूति कराए रखने वाला एक विशिष्ट तत्त्व है।

स्पष्टतः कबीर प्रेम विरह को आत्मा-परमात्मा में मिलन कराने वाला स्वीकार करते हुए कहते हैं ---

"विरह कहै कबीर सों तू जिन छांड़े मोहि।
पार ब्रह्म के तेज में तहां लै राखौं तोहि।।"(१४)

इस प्रकार, मगनीराम ने भी विरह को आत्मा का परिष्कारक एवं परमात्मा का सान्निध्य कराने वाला कहा है। उसकी सभी दशाओं का बड़ा ही मार्मिक एवं रहस्यानुभूति का अंगभूत वर्णन किया है ---

"सुरति निरंतर जब लगै, दरसन को अकुलाइ।
करुणामय तब कृपा कै, मगनीराम मिलाइ।।"(१५)

प्रेम और विरह की अनुभूति भावना-प्रधान हुआ करती है और दाम्पत्यभाव में ही इसकी चरम परिणति दिखाई देती है। इसी कारण संत कबीर ने भी अपनी रहस्य-साधना में दाम्पत्य भाव को ही प्रश्रय दिया एवं अपने(आत्मा) आपको "राम की बहुरिया" कहकर अभिहित किया है। इसी भाव की आधार भूमि पर उन्होंने प्रेम-विरह की विभिन्न अवस्थाओं एवं भंगिमाओं का भी वर्णन किया है। उसमें मिलन की

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

परिकल्पनायें भी आ जाती है। कबीर की यह मान्यता भी है कि रहस्य-साधना में दाम्पत्य भाव ही साधक को नैतिक भी रख सकता है। इसी कारण उन्होंने सहज-स्वाभाविक नैतिकताओं का ही उल्लेख यत्र-तत्र किया है। कबीर तो यहाँ तक कहते हैं कि जब नैतिकता का निबाह कठिन या दुर्लभ हो जाए तो अपने आप को सर्वात्म भाव से अपने प्रभु को अर्पित कर दो ---

"केवल नाम जपहु रे प्रानी, परहू एक कै सरना।"(१६)

भारतीय आत्म-दर्शन में इसी को प्रपत्तिवाद कहा गया है। कबीर की भाँति आत्मशुद्धि एवं ब्रह्म-साक्षात्कार के लिए नाम -जाप, ध्यान-धारण, भजन-कीर्त्तन, सत्संग का महत्त्व भी स्वीकार किया है। नाम ब्रह्म की उपासना के लिए संगीत को भी आवश्यक बताया है और नाम स्मरण या 'सुमिरन' का महत्त्व इस प्रकार प्रतिपादित किया है ---

"राम कहि के बैठिये, उठिये कहि के राम।
चलिये हरि हरि हरि जपत मगनीराम प्रनाम।।(१७)

आत्मशुद्धि करके भावातिरेक के क्षणों में उस परम तत्त्व की अनुभूति पाने के लिए कबीर ने अजपा जाप, साधना में उल्टी-चालें अर्थात् बहिर्मुखी प्रवृत्तियों को अन्तर्मुखी बनाने की प्रक्रिया, राजभोग आदि कई तत्त्वों को महत्त्व दिया है। इन्हें रहस्य-साधना की एक प्रकार से अनिवार्य प्रक्रिया बताया है।

पर अन्तर्आत्मा में परमात्मा की रहस्यानुभूति के लिए प्रेम-भक्ति को सर्वाधिक महत्त्व दिया है। प्रेमाश्रय से ही कबीर वह भावात्मक स्थिति पा लेते हैं कि जहाँ 'ब्रह्म' का भावनात्मक साक्षात्कार होकर, एक अचिंत्य आनन्द की सृष्टि करने लगता है । तब भक्त-भगवान में कोई स्थूल या दृश्य अंतराल नहीं रह जाता। आध्यात्मिक शब्दावली में इसी स्थिति को भावमूलक समाधि भी कहा गया है,जिसका वर्णन कबीर ने किया है--

"कबीर हरदी पीड़री चूना उज्जर भाय।
राम सनेही यों मिले दून्हों बरन गमाय।।"(१८)

कबीर तथा अन्य संत-साधकों ने तर्क-वितर्क से छुटकारा दिला द्रष्टा की मानसिकता तक पहुँचा देने वाली इस अवस्था को "उन्मनावस्था' भी कहा है। इस अवस्था में उपासक को उपास्य की आंतरिक अनुभूति(दर्शन) होने पर वह उसके साथ अपने अनेकविध संबंध स्थापित करने लगता है। इसी दशा में पहुँच कबीर ने आत्मा-परमात्मा के बारे में कहा है कि ---"हरि मेरा पीव मैं राम की बहुरिया।"(१९)

नारद भक्ति-सूत्र इस अवस्था को कान्ता भावावस्था भी कहा गया है।

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

जो कवि द्वय की साखियों में दाम्पत्य भाव को ही दर्शाती और प्रेम माधुर्य की चरम परिणति के भाव प्रदर्शन का करण है। इससे अगली अवस्था मिलन की है जिसमें पहुँचकर अंदर-बाहर के सभी स्थूल-सूक्ष्म भेद-भाव स्वत: ही समाप्त हो जाते हैं। मन में विविध कोमल-कान्त एवं माधुर्य संयत अनुभूतियाँ अँगराने लगती है। इस अवस्था का आभास पाकर साधिका आत्मा की जो दशा हो जाया करती है, वह नव-विवाहिता के प्रिय से प्रथम मिलन-क्षण के समय ही उद्‌भूत अनुभूति प्रवण हुआ करती है। संत मगनीराम की साधना में से इस प्रकार की सहजानुभूतियों को साकार करनेवाला एक उदाहरण द्रष्टव्य है ---

"जो मेरे पिया कहै, बात ताहि पर प्रान।
वारौं चरणोदक करौं, मगनीरामै प्रान।।" (२०)

उस स्थिति में मन के सारे द्वैत-द्विधा भाव जाते रहते हैं। यहाँ तक कि साधक साध्य के भाव भी नहीं रह जाता। दोनो एक दूसरे में समाकर द्वैत की सीमा पार कर अद्वैतत्त्व प्राप्त कर लेते हैं ---

"कबीर मन निर्मल भया, जैसे गंगा नीर।
तब पाछैं लागा हरि फिरै, कहत कबीर कबीर।।"(२१)

और फिर वह घड़ी आ ही जाती है जब रहस्य की अनवरत साधना में निरत साधक की आत्मा "मिलन" का सहज आभास पा लेती है और फिर मिलन-क्षण की अनुभूति को लक्षित कर जहाँ कबीर एक सुहागिन की अनुभूति और भाषा में कहते हैं --"अंक भरे भर भेटिया, मन में नाहि धीर।"(२२)

वहीं मगनीराम अधीरता की सारी स्थिति अपने प्रिय का एकांत दर्शन कर उसी में विलीन हो, एकत्त्व की चिरंतन भावना से भरकर तादात्म्य की गहनता में जैसे मौन वाणी में गुहारने लगती है ---

"पीव-पीव मों लीन सों, जानु पीव संसार।
परिखत रामहि कृपा सों, मगनीराम विचार।।"(२३)

इस प्रकार, लाली खोजते-खोजते आप भी लाल हो जाना कबीर की रहस्य-साधना की चरम-परिणति या अद्वैत की अंतिम अवस्था है । जहाँ पहुँच आनंद के सिवाय और कुछ भी शेष नहीं रह जाता ---

"लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल।
लाली खोजन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।।"(२४)

कबीर जहाँ आनन्द की उस अनिर्वचनीय स्थिति में रहस्य-साधना को चरमावस्था या चरम परिणति मानते हैं वहीं मगनीराम इसे तादात्म्य की स्थिति कहते हैं। साध्य-साधक का सारा अंतर छँट जाता है, बर्फ विगलित होकर जल में समा जाता है। और तब सारे वाद-विवाद भी स्वत: ही समाप्त हो जाते हैं ।

इस प्रकार, कवि द्वय की भावनात्मक रहस्य-साधना की यात्रा पूर्ण होती है।

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

रहस्य-साधक को जिन-जिन अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है कवि द्वय की वाणी में समायोजन है।

कवि द्वय की वाणी में साधनात्मक रहस्यवाद की चेतना के समन्वित दर्शन होते हैं। जहाँ, कबीर की रहस्य-साधना में विचित्र शब्दों, रुपों, दृश्यों एवं ध्वनियों की अनुभूति में से साधक को गुजरना पड़ता है, वहाँ मगनीराम के वर्णन में थोड़ा शुष्कता एवं नीरसता का समावेश हो गया है। कबीर की रहस्य-साधना में यदि योग भक्ति के मिश्रण के साथ-साथ रहस्यात्मक संकेतों का स्वरुप प्रधान है तो मगनीराम का साधनात्म रहस्यवाद विशुद्ध साधनात्मक या यौगिक न रहकर भावनात्मकता से समन्वित हो गया है।

निष्कर्ष :

इस प्रकार, निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है , कि रहस्य-साधना की जितनी भी स्थितियाँ, अवस्थाएँ एवं स्वरूप मिलते हैं, वे सब कवि द्वय के साहित्य में सहज ही खोजे देखे जा सकते हैं। इसलिए, कवि द्वय को एक प्रमुख एवं सफल भारतीय रहस्य-साधक कह सकते हैं। उनकी चेतना एवं भाव-साधनागत प्रक्रिया आदि सभी कुछ व्यापक एवं प्रत्येक स्तर पर उच्च कोटि का है। इसी कारण, कबीर को हिन्दी भाषा के साहित्य में.एक सर्वश्रेष्ठ रहस्य-साधक का स्थान व महत्त्व प्रदान किया गया है
एवं मगनीराम की सौजन्यता से हिन्दी भाषा संत साहित्य में पूर्णता एवं माधुर्य का समावेश हो गया है।

(१) कबीर ग्रंथावली : राम किशोर शर्मा(सं०), दसवाँ सं०, लोकभारती प्रकाशन, २०१५ई०, पृष्ठ सं०-२८.
(२) वही, पृष्ठ सं०-२१
(३) मगनीराम रचनावली: डॉ० अवधेश्वर अरुण, प्रथम सं०, वीणा प्रकाशन, २००३, पद सं०-१,पृष्ठ सं०-१२७
(४) कबीर की काव्य-साधना : डॉ० कृष्णदेव शर्मा, नवीन सं०, अखिलेश प्रकाशन, २००४ ई०,पृष्ठ सं०-४८.
(५) मगनीराम रचनावली : डॉ० अवधेश्वर अरुण, प्रथम सं०, वीणा प्रकाशन, २००३ ई०, साखी सं०-७१, पृष्ठ सं०-७.
(६) वही, साखी सं०-९८५,पृष्ठ सं०-८३.
(७) वही, साखी सं०-९८७, पृष्ठ सं-८३.
(८) कबीर की काव्य साधना : डॉ० कृष्ण देव शर्मा, नवीन सं०, अखिलेश प्रकाशन, २००४ ई०,पृष्ठ सं-५०.
(९) वही, पृष्ठ सं०-४९.
(१०) वही
(११) वही

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

(१२) कबीर ग्रंथावली : रामकिशोर शर्मा(सं०), १०वाँ सं०, लोकभारती प्रकाशन, २०१५ ई०.पृष्ठ सं०-२७.

(१३) मगनीराम रचनावली : डॉ० अवधेश्वर अरुण(सं०), प्रथम सं०, वीणा प्रकाशन, २००३ ई०, साखी सं०-१२२६, पृष्ठ सं०-१११.

(१४) कबीर की काव्य साधना : डॉ० कृष्णदेव शर्मा, नवीन सं०, अखिलेश प्रकाशन, २००४ ई०, पृष्ठ सं-५२.

(१५) मगनीराम रचनावली : डॉ० अवधेश्वर अरुण(सं०), प्रथम सं०, वीणा प्रकाशन,२००३ ई०,साखी सं-७२, पृष्ठ सं०-७.

(१६) कबीर की काव्य-साधना : डॉ० कृष्ण देव शर्मा, नवीन सं०, अखिलेश प्रकाशन, २००४ ई०,पृष्ठ सं-५१.

(१७) मगनीराम रचनावली : डॉ० अवधेश्वर अरुण, प्रथम संस्करण, वीणा प्रकाशन, २००३ ई०, भूमिका, पृष्ठ सं-१४.

(१८) कबीर की काव्य साधना: : डॉ० कृष्ण देव शर्मा, नवीन सं०, अखिलेश प्रकाशन,२००४ ई०,पृष्ठ सं-५२

(१९) वही

(२०) मगनीराम रचनावली : डॉ० अवधेश्वर अरुण(संपादक), प्रथम सं०, वीणा प्रकाशन, २००३ ई०,साखी सं०-५१६, पृष्ठ सं०- ४४

(२१) कबीर ग्रंथावली : डॉ० श्याम सुंदर दास(सं०), 8वाँ सं०, लोकभारती प्रकाशन, २०११ ई०. पृष्ठ सं०-१४.

(२२) वही

(२३) मगनीराम रचनावली : डॉ० अवधेश्वर अरुण (सं०) प्रथम सं०, वीणा प्रकाशन, २००३ ई०, साखी सं०-१८२, पृष्ठ सं०- ८३.

(२४) कबीर ग्रंथावली : रामकिशोर शर्मा(सं०), १०वाँ सं०, लोकभारती प्रकाशन, २०१५, पृष्ठ सं०-३३.